सरकारी नौकरियोंकी परीक्षाओंका माध्यम

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १९ सम्पादक : मगनभाई प्रभुदास देसाई अंक ४७

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–१४

अहमदाबाद, शनिवार, ता० २१ जनवरी, १९५६

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

भारतकी बेकारीकी समस्या

गलत दृष्टि

हाल ही पूनामें खेतीबारीसे सम्बन्ध रखनेवाले अर्थशास्त्रियोंका जो सम्मेलन हुआ, अुसका अुद्घाटन करते हुअे भारतके रिजर्व बैंकके गवर्नर श्री रामरावने अपने भाषणमें यह राय जाहिर की कि अुसी तरहका माल पैदा करनेवाले मध्यम और बड़े पैमानेके अुद्योगों पर तरह-तरहके प्रतिबन्ध लगाकर गृह-अुद्योगों और ग्रामोद्योगोंका विकास करनेका प्रयत्न संभव है देशमें फैली हुअी बेकारीकी समस्याको हल करनेके बजाय अुसे और बढ़ा दे। अुनके मतानुसार, गांवोंसे कस्बों और शहरोंमें लोगोंके आकर अेकत्र होनेकी गतिके बढ़नेके कारण तथा शिक्षाकी सुविधायें बढ़नेके कारण गांवोंकी तुलनामें शहरोंके अधिक शिक्षित वर्गोंकी बेकारीने ग्रामीण क्षेत्रोंके लोगोंकी बेकारीसे ज्यादा गंभीर रूप ग्रहण कर लिया है। चूंकि गृह-अुद्योग और ग्रामोद्योग अपनी नीची कमाअीके कारण शहरके शिक्षित बेकारोंको संभवतः अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सकते, अिसलिअे मध्यम और बड़े पैमानेके अुद्योगोंके विस्तार पर रोक लगानेसे बेकारीकी मौजूदा समस्या बदसे बदतर ही हो सकती है। अुनकी यह निश्चित राय है कि अिसका अिलाज बड़े अुद्योगोंके विस्तार पर रोक लगानेके बजाय शहरी भागोंमें अुद्योगोंको तेजीसे बढ़ानेमें, मकानोंकी हालत सुधारनेमें और गन्दी बस्तियोंकी सफाअी और सुधार करनेमें है। अिसलिअे अुन्होंने अपने भाषणमें यह अिच्छा प्रकट की कि अर्थशास्त्रियोंको तटस्थ भावसे बेकारीकी समस्याकी जांच करनी चाहिये और अैसे अिलाज सुझाने चाहिये, जो सैद्धान्तिक पूर्वग्रहों या आर्थिक अन्धविश्वासोंसे मुक्त हों।

२. श्री रामरावके अिस कथनसे बहुत कम लोग असहमत होंगे कि भारतमें बेकारीकी समस्या हमारी अर्थ-व्यवस्थाकी अेक बारहमासी समस्या है; वह कोअी अस्थायी और थोड़े समयकी समस्या नहीं है, जो ५ या १० वर्षके अर्सेमें पूरी तरह हल की जा सके। फिर भी शहरी भागोंमें जितनी संख्यामें लोग बेकार हैं, जिस तरहकी बेकारी वहां फैली हुअी है और जिन वर्गोंके लोग बेकार हैं, अुनके सीमित आंकड़े श्री रामरावके अिस दावेको झूठा साबित कर देते हैं कि शिक्षित बेकारोंकी समस्या ज्यादा विकट और गंभीर है और अिसलिअे वह वास्तविक आर्थिक नीतिका आधार बननी चाहिये।

प्रश्नसे सम्बन्ध रखनेवाले तथ्य

३. शहरी भागोंकी बेकारीने राष्ट्रीय संकटका रूप भारतमें स्वराज्य-प्राप्तिके बाद ही लिया है, जब नवम्बर १९५१ में पैसा-सम्बन्धी नअी नीति आरम्भ होनेके बाद चीजोंके भावोंमें आम तौर पर मन्दी आ गअी। अेक ओर भावोंमें अेकाअेक आनेवाली मंदीके कारण और दूसरी ओर बहुलक्षी बिक्री-कर दाखिल किये जानेके कारण, कंट्रोल अुठानेके लिअे अुठाये गये कदमोंके कारण, सड़क-यातायातके राष्ट्रीयकरणके कारण तथा राज्य-सरकारों द्वारा अुठाये गये अैसे दूसरे कदमोंके कारण मालके वितरणसे सम्बन्ध रखनेवाले व्यापार-धंधोंमें और शासनतंत्रमें कामधन्धा मिलनेके मौके तेजीसे घट गये। शहरी भागोंमें अिस समस्याकी व्यापकताको जाननेके लिअे कोअी आंकड़े प्राप्त नहीं हैं; और अेम्प्लायमेन्ट अेक्सचेन्ज नामक संस्थाओंकी समय समय पर निकलनेवाली रिपोर्टें अिस समस्याके आकारको बतानेके बजाय अुसके झुकावोंको ही बताती हैं। चूंकि शहरी हिस्से ग्रामीण हिस्सोंके मुकाबले ज्यादा संगठित हैं, राजनीतिक दृष्टिसे अधिक जाग्रत हैं और राजनीतिक दलों, ट्रेड यूनियनके नेताओं तथा अखबारोंसे अुनके निकटके सम्बन्ध होते हैं, अिसलिअे शहरी अिलाकोंमें बेकारोंकी तेजीसे बढ़नेवाली संख्याको, जिसकी महत्त्वपूर्ण औद्योगिक और शहरी केन्द्रोंमें कअी अेम्प्लायमेन्ट अेक्सचेन्ज संस्थाओंकी स्थापनाके कारण बेहतर जानकारी होती है, अधिक प्रसिद्धि मिली है और आज भी मिलती है, और अिसलिअे अुसकी तरफ ज्यादा लोगोंका ध्यान जाता है। लेकिन शहरी भागोंकी बेकारीकी समस्याका अुसके आकारमें या सामाजिक परिणाममें ग्रामीण क्षेत्रोंकी समस्यासे कोअी मुकाबला नहीं हो सकता। दूसरे शब्दोंमें, शहरी समस्याके बारेमें लोगोंको अधिक जाग्रत होनेके कअी आकस्मिक कारण हैं।

समस्याका स्वरूप

४. यह बात बहुत कम समझी जाती है कि भारतके शहरी बेकारोंमें मुख्यतः अकुशल और अपढ़ मजदूर होते हैं; पढ़े-लिखे, कुशल और अर्ध-कुशल लोगोंमें बेकारीका प्रमाण कम होता है। हाल ही किया गया कलकत्ता शहरके दर्जशुदा बेकारोंका विश्लेषण यह बताता है, और वह अधिकतर शहरी केन्द्रों पर लागू होता है, कि : (१) रजिस्टरमें दर्जशुदा बेकारोंमें से करीब ४८ प्रतिशत अकुशल मजदूर होते हैं; (२) शिक्षित बेकारोंमें बहुत बड़ा भाग ताजे मेट्रिक और अिंटर पास हुअे लोगोंका तथा ग्रेज्युअेटोंका होता है, जिनमें ट्रेनिंगकी कोअी विशेष कुशलता, झुकाव या पसन्दगी नहीं होती और जो मुख्यतः व्यवस्था-सम्बन्धी अथवा कारकूनीकी नौकरीकी खोजमें होते हैं; और (३) अैसे पढ़े-लिखे, अकुशल और ट्रेनिंग न पाये हुअे लोगोंकी बड़ी संख्या देशके विभिन्न भागोंमें जानेके लिअे भी तैयार नहीं होती। रजिस्टरमें दर्जशुदा जो बेकार लोग अनुभवी होते हैं, ट्रेनिंग लिये हुअे होते हैं अथवा किसी दस्तकारी या धन्धेमें कुशल होते हैं, अुन्हें काम मिलनेमें शिक्षित 'अकुशल' लोगोंकी तुलनामें ज्यादा आसानी होती है। बहुत अूंची योग्यतावाले लोगों या टेकनिकल ज्ञान रखनेवाले लोगोंमें बहुत कम बेकारी होती है और दूसरोंकी तुलनामें वह बहुत कम समय तक टिकती है। अिस विश्लेषणसे स्पष्ट ही हम अिस अनुमान पर पहुंचते हैं कि मौजूदा 'सामान्य' शिक्षा-प्रणालीको जारी रखनेसे बेकारीकी समस्या घटनेके बजाय

www.vinoba.in

बढ़ेगी ही, क्योंकि कोअी भी अर्थ-व्यवस्था या विकास-योजना भारतके स्कूलों, कॉलेजों या युनिवर्सिटियोंसे हर साल हजारोंकी संख्यामें निकलनेवाले लोगोंको किसी अुपयोगी धन्धेमें या कारकूनी अथवा शासन-सम्बन्धी नौकरियोंमें नहीं लगा सकती। अतः अिस प्रश्नका हल अधिक शहरीकरण और अुद्योगीकरणमें नहीं, बल्कि शहरोंके शिक्षित नौजवानोंको विविध धन्धोंकी तालीम देकर तैयार करनेमें और शिक्षाका पुनर्गठन करके 'सभ्य' धन्धोंके बारेमें प्रचलित आजके विचारोंका अन्त करनेमें है।

५. शहरी भागोंमें दर्ज किये हुअे बेकारोंमें बड़ी संख्याके लोग अकुशल और अपढ़ होते हैं और वे साधारण तौर पर ३० से ५० रुपये माहवार तनखाहवाली चपरासी या चौकीदारकी नौकरी पसन्द करते हैं। परंतु यह चीज शहरी हिस्सोंकी स्थितिको नहीं, बल्कि आसपासके ग्रामीण हिस्सोंमें फैली हुअी स्थितिको बताती है। अकुशल, बेजमीन और जमीनवाले खेतिहर मजदूर खेतीकाम न होनेके अर्सेमें गांव छोड़कर शहरोंमें जाते हैं; अिसी कारणसे भारतीय कारखानोंके मजदूर 'स्थान-परिवर्तन करनेवाले' मजदूर कहे जाते हैं। कारखानोंके मजदूरोंमें गैरहाजिरी जो ज्यादा पाअी जाती है, अुसका भी यही कारण है। अिन मजदूरोंको अपने गांवोंमें ही सालके ३६५ दिन काम मिलता रहे, तो गांवोंसे शहरोंकी तरफ बहनेवाला प्रवाह बन्द हो जाय। सालके अमुक मौसममें शहरोंकी तरफ अुनके दौड़नेका कारण शहरी जीवनका आकर्षण नहीं, बल्कि गांवोंमें कामधंधेका अभाव होता है।

६. संक्षेपमें, गांवोंकी बेकारीकी मात्रा शहरोंकी बेकारीसे बहुत ज्यादा है। क्योंकि गांवोंकी आबादीकी तुलनामें शहरोंकी आबादी बहुत कम है। शहरी भागोंके बेकारोंमें बड़ी संख्याके लोग अकुशल और अपढ़ मजदूर ही होते हैं, जो ३० से ५० रुपयेकी चपरासी या चौकीदारकी नौकरीकी खोजमें गांवोंसे शहरोंमें आते हैं। शहरोंके तथाकथित 'शिक्षित' बेकारोंमें किसी भी नौकरी या धंधेकी तालीम अथवा कुशलता नहीं होती तथा औद्योगिक विकासकी कोअी भी योजना सालाना अितनी कारकूनी नौकरियां पैदा नहीं कर सकती, जिसमें अिन सब लोगोंको काम दिया जा सके। अिसलिअे अिसका सच्चा अिलाज यही है कि शहरोंके बहुसंख्यक नौजवानोंके लिअे अुद्योग-प्रधान शिक्षणकी व्यवस्था की जाय तथा जीविका कमानेके लिअे अुन्हें किसी अुद्योगकी तालीम दी जाय।

गांवोंकी समस्या

७. खेतिहर मजदूर जांच समितिकी हाल ही प्रकाशित हुअी रिपोर्ट बताती है कि शहरी भागोंकी बेकारीसे गांवोंकी अर्धबेकारी बहुत ज्यादा और व्यापक है। यह सच है कि अलग अलग स्थानों पर अुसका प्रमाण कम-ज्यादा है, लेकिन कहीं भी वह अितना कम नहीं है कि अुसकी अुपेक्षा की जा सके; और खेतीके मौसममें खेती-कामसे अितनी कमाअी नहीं होती कि जिससे अुचित स्तर पर जीवन-निर्वाह हो सके। १९५१ की जनगणनाकी रिपोर्टमें बताये मुताबिक खेतीबारी तथा अन्य धंधोंमें स्वतंत्र रूपसे काम करनेवाले लोगोंकी संख्या बहुत बड़ी है, और अुनमें विशाल पैमाने पर फैली हुअी बेकारीके कारण अुनकी काम करनेकी और जीवनकी स्थिति आज बहुत बुरी हो गअी है। जनमत और बहुसंख्यक लोगोंके वोटके आधार पर जिसका राजतंत्र चलता है अैसी लोकशाहीमें पेट पर पट्टी बांधकर जीवन बितानेवाले करोड़ों लोगोंकी जरूरतों पर सबसे पहले ध्यान दिया जाना चाहिये। भारतके ग्रामीण भागोंमें रहनेवाले खेतिहर मजदूरों तथा दूसरा काम करनेवाले मजदूरोंकी स्थिति लगातार ज्यादा बिगड़ती गअी है, अिसका खास कारण यह है कि अुनमें संगठन नहीं है तथा राजनीतक और दूसरी संस्थाओंके साथ अुनका संपर्क नहीं है। आकार, व्यापकता और प्रमाणकी दृष्टिसे देखते हुअे गांवोंमें फैली हुअी अर्धबेकारीका सवाल बुनियादी और प्राथमिक महत्त्वका सवाल है, क्योंकि अुसकी वजहसे विशाल मानव-संपत्ति बरबाद होती है; अितना ही नहीं वह देशकी सामाजिक तथा राजनीतिक स्थिरताके लिअे हमेशाका खतरा है।

अुसका हल

८. अिसी कारणसे कर्वे-समितिने यह सिफारिश की है कि शहरी केन्द्रोंमें या अुनके आसपास अुद्योगोंके अधिक विस्तार पर स्थायी रोक लगाअी जाय तथा खेतीबारी और अुद्योगोंके बीच सामंजस्य स्थापित करनेवाला विकेन्द्रित ढंगका आर्थिक विकास करनेके लिअे नअी वैज्ञानिक अुत्पादन पद्धतियां अपनानेका योजनाबद्ध प्रयत्न किया जाय। जब तक गांवोंमें स्वतंत्र रूपसे काम करनेवाले कारीगरोंके लिअे कामकी बुनियादी हालतें पैदा नहीं की जातीं या अुनके बनाये हुअे मालकी बिक्रीकी गारंटी नहीं दी जाती, तब तक वे अुत्पादन नहीं बढ़ा सकते। तब फिर अुन्नत अुत्पादन पद्धतियोंको अपनानेकी तो बात ही क्या की जाय? जब तक ग्रामीण अिलाकोंकी हालतें आज जैसी ही बनी रहेंगी और आज तक जैसे अुनकी अुपेक्षा की जाती रही वैसे ही आगे भी की जाती रहेगी, अथवा आजकी तरह अनेक राजनीतिक, औद्योगिक या अन्य प्रकारके निष्णातों द्वारा बिगाड़ी जाती रहेगी, तब तक हमारे आर्थिक विकासकी प्राथमिक समस्या कभी हल नहीं होगी।

शहरीकरणकी बुराअियां

९. अूपर बताये गये तथ्योंके विरुद्ध यह दलील करना बिलकुल गलत होगा कि अूंची आमदनीका लालच और तरह तरहके दूसरे मौके गांवके लोगोंको शहरी भागोंकी ओर खींचते हैं। शहरी भागोंके खर्चीले रहन-सहनको और नीची आमदनीवाले वर्गोंको मिलनेवाली घरबारकी और जीवनकी दूसरी सुविधाओंके घटिया स्तरको देखते हुअे शहरोंकी तथाकथित अूंची कमाअी वास्तवमें ग्रामीण भागोंकी आमदनीसे नीची ही होती है। और वह भी गांवोंसे शहरोंमें जानेवाले हजारों लोगोंमें से कुछ लोगोंको ही मिलती है। अैसी हालतोंमें गांवोंसे लोगोंका शहरोंमें लगातार जाते रहना निश्चित ही देशके आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक कल्याणके लिअे हानिकारक है। गांवोंके अकुशल और अपढ़ मजदूरोंकी निरन्तर बनी रहनेवाली बेकारी तथा कअी तरहके बुरे प्रलोभनोंके बीच गन्दी मजदूर-बस्तियोंकी गन्दी चालों और झोंपड़ियोंमें अुनका निवास अुन्हें अुग्र राजनीतिक और आर्थिक विचारोंके प्रलोभनोंमें फंसाता है और वे जनताके जीवन और जायदादके लिअे स्थायी खतरा बने रहते हैं। अनियंत्रित अुद्योगीकरणके कारण खड़े होनेवाले शहर शुद्ध अनिष्टके जनक होते हैं — अिस बातको दुनियाका आर्थिक अितिहास काफी हद तक साबित करता है। बढ़ती हुअी आबादीवाले भारतको तो अिस बुराअीसे हर हालतमें बचना चाहिये।

१०. श्री रामराव शहरीकरणके राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिणामों संबंधी जानकारी प्राप्त करनेकी स्थितिमें हैं। पुराने विचारवाले अर्थशास्त्री शहरीकरणको अुद्योगीकरण और आर्थिक विकासका गज मानते हैं। अुद्योगोंकी दृष्टिसे आगे बढ़े हुअे दुनियाके हर देशमें शहरीकरणने भारी संख्यामें मनुष्योंकी कुरबानी ली है; और अुन देशोंकी सरकारें सत्ताके स्थान पर टिकी रहीं, अिसका बहुत बड़ा कारण यह है कि वहां सामन्तशाही या राजशाही पद्धतिसे काम करनेवाली सरकारें थीं। भारत जैसे देशमें, जहां बालिग मताधिकार पर आधार रखनेवाली लोकतांत्रिक राज्य-व्यवस्था है, अिस बातको बरदाश्त करना या सामान्य विकासका चिन्ह मानना असंभव है। दूसरे शब्दोंमें, योजनाबद्ध आर्थिक विकासको समाजके व्यापक हितकी दृष्टिसे अुद्योगीकरण और शहरीकरणकी गति, स्वरूप और प्रदेशों वगैराका निश्चित रूपसे नियंत्रण करना चाहिये।

www.vinoba.in

११. देशकी नीति निर्माण करनेवाले लोग कर्वे-समितिकी सिफारिश स्वीकार न करें, अिस हेतुसे अुन्हें डरानेके लिअे श्री रामरावने और अनेक अुद्योगपतियोंने मुद्राप्रसारका हौआ फिर खड़ा किया है। अुन्हें अैसा डर है कि रोजाना अुपयोगके मालकी कूती हुअी अतिरिक्त मांग पूरी करनेके लिअे अधिक अुत्पादनकी जिम्मेदारी अगर गृह-अुद्योगोंको सौंपी गअी तो देशमें मालकी तंगी पैदा होगी। अेक बार गृह-अुद्योगोंको अर्थ-व्यवस्था तथा अुसके विकासका अविभाज्य अंग बनानेका तथा अुनके संचालनकी बुनियादी जरूरतें पूरी करनेका निर्णय कर लिया जाय, तो बादमें मालकी मांगके अनुसार अधिक अुत्पादन किया जा सकता है और अुत्पादनकी व्यवस्था भी की जा सकती है। क्या खानगी, 'असंगठित' और छोटे पैमानेके अुद्योगके ज्वलन्त अुदाहरण हमारे कृषि-अुद्योगने प्रथम पंचवर्षीय योजनामें निर्धारित किये गये लक्ष्यसे भी ज्यादा अुत्पादन करके नहीं बता दिया है?

जे० डी० सुन्दरम्

[अिस लेखके आरंभमें दिये गये श्री रामरावके विचार मुझे श्री घनश्यामदास बिड़लाकी अैसी ही हिमायतकी याद दिलाते हैं, जो अुन्होंने आम जनताकी पूरी अुपेक्षा करके हमारे शिक्षित वर्गोंकी बेकारी पर ध्यान देनेके बारेमें की थी। अुस पर अपने अेक लेखमें मैंने टीका की थी। (देखिये, ता० १९-११-'५५ के 'हरिजन-सेवक' में छपा 'मौजूदा आर्थिक आबहवा' नामक लेख।) श्री बिड़ला अुद्योगके खानगी सेक्टरको ध्यानमें रखकर बोले थे, श्री रामराव अब सरकार या सरकारी सेक्टरको ध्यानमें रखकर बोले हैं। दोनोंके अुद्गार अुनकी यह अिच्छा बताते हैं कि देशकी आर्थिक हवा किस दिशामें बहनी चाहिये। अैसा लगता है कि अुद्योगपति, बैंकर, अर्थशास्त्री और भारतके अैसे ही दूसरे मुट्ठीभर लोग आज गांवों और छोटे पैमानेके अुद्योगोंके खिलाफ आवाज अुठानेके लिअे अेकत्रित हो गये हैं। अिन लक्षणोंके बारेमें भारतके लोकतंत्रको सावधान रहना चाहिये।

६-१-'५६ —म० प्र०]

(अंग्रेजीसे)

ताड़गुड़ अुद्योगका महत्त्व

भारतके लिअे अिस अुद्योगका विशेष महत्त्व है। अिसके खास कारण ये हैं:

१. ताड़के रससे गुड़ और शक्कर बन सकती है। मौसमके दिनोंमें अिससे लोगोंको रोजी मिलती है। ताड़के पत्तोंसे तरह-तरहकी चीजें बनानेका अुद्योग तो पूरे साल चलता ही रहता है।

२. देशकी बढ़ती हुअी आबादीकी शक्करकी जरूरत बेकार जानेवाले ताड़रससे शक्कर बना कर पूरी की जा सकती है; और गन्नेकी फसलके लिअे काममें ली जानेवाली जमीन दूसरी फसलें पैदा करनेके काम आ सकती ह।

३. ताड़के पेड़ोंको यदि व्यवस्थित ढंगसे बढ़ाया जाय और अुनकी देखभाल की जाय, तो जमीनका कटना रोका जा सकता है और अुनसे कम कीमतके मकान बनानेके लिअे लकड़ी भी मिल सकती है।

४. ताड़के रससे गुड़-शक्कर तैयार करके शराबबन्दीके सम्बन्धमें संविधानके आदेशका पालन किया जा सकता है और अुसके कारण बेकार बननेवाले ताड़ छेदनेवालोंको बदलेमें दूसरा धन्धा भी दिया जा सकता है।

यही कारण है कि अिस अुद्योगको विशाल पैमाने पर चला कर अिसके पूरे विकासकी भूमिका तैयार करनेके हेतुसे खादी-ग्रामोद्योग बोर्डने नीचेका कार्यक्रम सुझाया है:

देशमें कुल १२ करोड़ ताड़के झाड़ हैं। अुनमें से पांच करोड़ छेदे जाने लायक हैं। अगले पांच वर्षोंमें ८७.६ लाख अधिक ताड़ोंको छेदा जाय। अुनके रससे गुड़ और शक्कर बनानेके लिअे सारे देशमें नमूनेके २,००० तालीम अुत्पादन केन्द्र, ८० सघन अुत्पादन केन्द्र तथा १० बड़े और २० छोटे नमूनेके शक्कर अुत्पादन केन्द्र खोले जायं।

अिन केन्द्रों द्वारा ताड़गुड़का अुत्पादन, जो १९५३ में १६ लाख मन था, १९६०-६१ में बढ़ाकर ५३.२ लाख मन तक ले जानेका लक्ष्य निर्धारित किया गया है। अिस बढ़तीके फलस्वरूप देशकी ७.२८ लाख मनकी अतिरिक्त मांग पूरी की जा सकेगी और योजना-कालमें ताड़के पत्तोंसे तरह-तरहकी चीजें बना कर लगभग ९.३१ करोड़ रुपयोंका माल अुत्पन्न किया जा सकेगा। अिसके फलस्वरूप कुल ३,८१,२६६ आदमियोंको रोजी मिलेगी। अर्थात् आज जो करीब २,४३,६०० आदमी अिस अुद्योगमें लगे हुअे हैं अुनकी संख्यामें १,३७,६६६ आदमियोंकी वृद्धि होगी। और अुनके बीच १८.१५ करोड़ रुपये बांटे जायंगे। अिससे आज ताड़ छेदनेवाले मौसममें सालाना जो ३८२ रुपयेकी कमाअी करते हैं वह बढ़कर ६८२ रुपये तक पहुंच जायगी। अिस तरह अुनकी आमदनी भी बढ़ेगी।

ताड़गुड़ और शक्करकी खपत बढ़े, अिसके लिअे प्रतिमन रु० २-८-० की राहत देनेका सुझाव रखा गया है। अिस हिसाबसे गुड़में ४०९ लाख रुपये और शक्करमें ५६.६ लाख रुपये मिलाकर कुल ४६५.६ लाख रुपयोंकी राहत दी जायगी।

अिस समूची योजनामें साधनोंकी खरीदमें सहायताके तौर पर, कीमतमें राहतके तौर पर, साधनोंकी खरीद तथा चल रहे कामकाजके लिअे कर्जके तौर पर और संशोधन तथा तालीमके लिअे — अिस तरह अलग-अलग रूपमें कुल १५.२९ करोड़ रुपये अिस अुद्योगकी विकास-योजनाके लिअे खर्च करने पड़ेंगे।

अिस कार्यक्रम पर अमल करनेके लिअे नीचे बताअी व्यवस्था करनी होगी:

१. नीरा या गुड़के अुत्पादन केन्द्रोंके आसपास पांच मीलके घेरेमें ताड़ीके लिअे ताड़ छेदनेकी मनाही की जाय।

२. केन्द्रीय, प्रान्तीय और स्थानीय स्वराज्य सरकारोंके अधिकारके ताड़ मामूली लगान पर अुत्पादन-केन्द्रोंको देने होंगे और खानगी मालिकीके पेड़ोंका लगान भी तय करना होगा।

३. ताड़गुड़ अुद्योगकी जरूरतोंको ध्यानमें रख कर सरकारी पेड़ोंके नीलामका नियंत्रण करना होगा।

४. ताड़, नारियल, खजूर वगैराके रससे बननेवाली शक्करको आबकारी महसूलसे मुक्त रखना होगा और धीरे-धीरे अिस नीतिके अमलका दायरा बढ़ाना होगा।

५. जहां भी संभव हो वहां सरकारी खरीदमें ताड़गुड़को तरजीह दी जानी चाहिये। और अिस अुद्योगको प्रोत्साहन देनेके लिअे भावमें २५ प्रतिशत राहत दी जानी चाहिये।

६. सरकारी जंगलोंसे अुत्पादकोंको मामूली दरों पर या मुफ्त अींधन मुहैया करना होगा।

७. ताड़गुड़ बनानेके परवाने छूटसे देने चाहिये।

८. दूसरी पंचवर्षीय योजनाके अर्सेमें सारे देशमें शराबबन्दीकी नीतिको योजनाबद्ध ढंगसे फैलाना होगा।

अिस प्रकार ताड़गुड़ अुद्योगका विकास देशकी मानव-शक्तिका नाश करनेवाले अुद्योगका स्थान लेकर देशकी आर्थिक स्थितिको मजबूत बनानेमें सहायक होगा और देशकी बेकारीका प्रश्न हल करनेमें भी मददगार साबित होगा।

(गुजरातीसे) वि०

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

२१ जनवरी १९५६

सरकारी नौकरियोंकी परीक्षाओंका माध्यम

कलकत्ता युनिवर्सिटीके वाअिस-चान्सलर प्रो० सिद्धान्तने पंजाब विश्वविद्यालयके वार्षिक पदवीदान-समारंभमें भाषण देते हुअे अेक अुपयुक्त प्रश्न छेड़ा है। अंग्रेजीकी जरूरत पर भार देनेकी बात तो आजकल अैसे समारंभोंका अेक ध्रुवपद ही बन गअी है। यही ध्रुव-पद प्रो० सिद्धान्तने भी गाया। अैसा करते हुअे अुन्होंने यह प्रश्न छेड़ा कि अूंची सरकारी नौकरियोंकी परीक्षाओंकी भाषा कौनसी रखी जाय। पहले अिस संबंधमें अुन्होंने जो कहा अुसे देखें:

"आनेवाले अनेक वर्षों तक क्या अंग्रेजीको ही शिक्षणका माध्यम बनाये रखना हमारे नसीबमें लिखा है? — अैसा प्रश्न खुद पूछकर अुन्होंने खुद ही अिसका अुत्तर दिया कि अिस विषयमें मैं बहुत निराशावादी तो नहीं होअूंगा, लेकिन अितना जरूर भारपूर्वक कहूंगा कि प्रादेशिक भाषाओंकी व्यंजना-शक्तिका विकास करना हो तो अुसके लिअे आज जितना प्रयत्न किया जा रहा है अुससे कहीं ज्यादा प्रयत्न करना होगा — विद्वानों और सरकारों दोनोंको मिलकर यह प्रयत्न करना होगा।" (अमृत बाजार पत्रिका, २२-१२-'५५)

यह चीज तो दीयेके प्रकाशकी तरह स्पष्ट है। अंग्रेजीने हमारे शिक्षणका माध्यम बनकर हमारी प्रदेश-भाषाओंका विकास नहीं होने दिया, अिसलिअे अुनके विकासका काम अेकसाथ करनेका जिम्मा हम पर आ गया है। बेशक, वह बहुत भारी काम है। पर वह अितना कठिन नहीं है, क्योंकि वह हमारी मातृभाषाओंमें नये प्राण पूरनेका काम है। और प्राण पूरनेका यह काम अुनके सपूतोंके लिअे कठिन तो हरगिज नहीं माना जा सकता।

परंतु प्रो० सिद्धान्तने अैसे महापराक्रमका साहस करनेकी बात कहनेके बजाय दूसरी ही बात कही है। अुन्होंने कहा, जो कठिनाअियां हमारी आंखोंके सामने हैं, अुन्हें कम आंकनेसे हमारा काम नहीं चलेगा। कठिनाअी न हो तो अुसे हल करनेका प्रश्न ही कहां अुठता है? बात तो अुससे न दबने या न घबरानेकी है। 'कठिनाअी हमें हल करनी है और अुसका यह रास्ता है' — अैसा सुर निकालनेका यह प्रश्न है।

प्रो० सिद्धान्तने खास कठिनाअी सरकारी नौकरियोंकी परीक्षाओंके बारेमें बताअी है:

"अखिल भारतीय नौकरियोंसे संबंध रखनेवाली कठिनाअियां आसानीसे दूर नहीं की जा सकतीं। यह ठीक है कि विश्वविद्यालयोंके कुछ ग्रेज्युअेट ही अुनमें बैठते हैं। लेकिन भविष्यमें अुनकी संख्या बढ़ेगी, क्योंकि कल्याण-राज्यकी प्रवृत्तियां जैसे जैसे बढ़ती जायंगी, वैसे वैसे नये नये विकास-विभाग खुलेंगे और अुनके लिअे अधिकाधिक संख्यामें नौकरोंकी जरूरत होगी। परंतु जो लोग अिन क्षेत्रोंमें सरकारी नौकर बननेके लिअे आयें, अुनका अंग्रेजी पर बहुत ज्यादा अधिकार होना चाहिये।"

"अूंची सरकारी नौकरियोंकी भरतीके कामका मेरा वर्षोंका अनुभव है। अुससे संबंध रखनेवाले बोर्डोंने बार बार यह शिकायत की है कि अुम्मीदवार खुद विचार करनेकी शक्ति नहीं रखते और लेखन-कलामें कुशल नहीं होते। अिसका अेकमात्र कारण अंग्रेजी भाषा पर अुनका कम अधिकार नहीं माना जा सकता। अंग्रेजी आज भी अुच्च परीक्षाओंका माध्यम है और आगे भी अमुक समय तक तो रहने ही वाली है।"

"ये परीक्षायें हिन्दीमें ली जायं, तो अहिन्दी-भाषी अुम्मीदवारोंको हिन्दी-भाषी अुम्मीदवारोंके साथ बराबरीकी होड़ करनेमें बरसों लग जायंगे। दर्जन भर प्रदेश-भाषाओंमें परीक्षायें ली जायं, तो अुनका समान स्तर करनेके काममें बहुतसी — लगभग हल न की जा सकें अैसी — कठिनाअियां पैदा होंगी। विद्यार्थियोंकी संख्या बढ़नेसे अेक ही विषयकी परीक्षामें या अलग अलग वैकल्पिक विषयोंकी परीक्षाओंमें सारे परीक्षकों द्वारा अेकसा स्तर रखकर परीक्षा-पत्र जांचनेका काम भी कठिन होगा। अगर अलग अलग भाषाओंमें अुत्तर दिये जायं तो स्वाभाविक है कि अुस अुस भाषाके प्रदेशवाले परीक्षकोंको परीक्षा-पत्र जांचनेके लिअे दिये जायंगे। अिससे संभव है अुदार बननेका रुख पैदा हो और अुसमें अुचित मर्यादाका भी अुल्लंघन हो जाय।"

"आज जब भाषाके अभिमानका प्रकोप बढ़ा है और दुर्भाग्यसे वह राष्ट्रीय भावना पर आक्रमण करता मालूम होता है, तब अैसा प्रयोग निकट भविष्यमें करना तो अुचित नहीं माना जायगा।" (अ० बा० पत्रिका, २२-१२-'५५)

प्रो० सिद्धान्त परीक्षाओंकी भाषा अंग्रेजी न रहने पर अुसका स्थान हिन्दीको देना चाहेंगे। प्रदेश-भाषायें तत्काल नहीं तो जल्दी अवश्य ही अिन परीक्षाओंका माध्यम बनाअी जा सकती हैं। परंतु अिसमें अुनकी आपत्ति यह है कि अगर अनेक भाषाओंमें परीक्षा-पत्र लिखे जायं तो अुनका समान स्तर नहीं रखा जा सकता। तब क्या किया जाय? अुत्तर यही रह जाता है कि अंग्रेजी माध्यम जारी रखा जाय! क्योंकि अहिन्दी-भाषी प्रदेशोंके अुम्मीदवार हिन्दीमें अच्छी तरह लिख नहीं सकेंगे, अिसके लिअे अुन्हें काफी समय मिलना चाहिये, और वह समय काफी लंबा होगा!

प्रो० सिद्धान्तकी यह बात अूपरसे देखने पर तो तर्कशुद्ध मालूम होगी। परंतु अुसके बारेमें दूसरी ही आपत्ति है। वह यह कि जमाना झट आगे बढ़नेके पक्षमें है। यह सच है कि अंग्रेजीका ज्ञान अब अितना अच्छा नहीं रहा कि माध्यमके रूपमें अुस भाषाका अुपयोग किया जा सके। और यदि अब अुसे माध्यम रखनेकी आवश्यकता न रही हो तो अुसका दुःख क्यों किया जाय? दूसरे, विश्वविद्यालय अब अपने शिक्षणका माध्यम बदलने लगे हैं। और वह अच्छी बात है। अैसा करना अुनका धर्म है। स्वराज्यके अुठ रहे ज्वारके सामने सरकारें भी हिन्दी जल्दी सिखानेका प्रयत्न करने लगी हैं और प्रदेश-भाषाओंको मान देने लगी हैं। हिन्दी सिखाना हो तो अंग्रेजी अभी तक जो समय खाती थी अुसे कम करना होगा। अिसलिअे अंग्रेजीका ज्ञान माध्यमके रूपमें अुसका अुपयोग करने जितना तो नहीं ही दिया जा सकता।

अिसके अलावा, कांग्रेस वर्किंग कमेटीने जाहिर किया है कि सरकारी नौकरियोंकी परीक्षायें प्रदेश-भाषाओंमें भी ली जायंगी। केन्द्रीय सरकारने यह बात स्वीकार की है।

अैसी परिस्थितियोंमें यह स्पष्ट है कि देशके संविधानने विकासका जो मार्ग बताया है अुसे अपनाना शुरू किया जाय और अुसके लिअे जरूरी तरीके खोजे जायें। अिस समय राज्य-पुन-र्रचनाका जो काम चल रहा है, अुसमें क्या कठिनाअियां नहीं हैं? फिर भी रास्ता निकाला ही जाता है, क्योंकि वह काम टाला नहीं जा सकता। वैसा ही यह भाषाओंका काम है। अिन भाषाओंको अुनका अुचित स्थान देकर देशके सांस्कृतिक, शैक्षणिक तथा राजनीतिक जीवनको नये मार्ग पर लगानेके अिस काममें

www.vinoba.in

अब ज्यादा ढिलाअी नहीं की जा सकती। नये जमानेकी अिस हवाको पहचान कर विश्वविद्यालय तथा शिक्षा-विभागके अध्यक्ष यथासंभव जितने जल्दी चलने लगें अुतना ही अच्छा होगा। वर्ना वे जनताके कड़े अुलाहनेके पात्र बनेंगे और अुसमें अुन्हींका दोष माना जायगा।

प्रो० सिद्धान्त अनेकभाषी परीक्षा-पत्रोंके समान स्तर या 'मॉडरेशन' की कठिनाअी बताते हैं। क्या यह अितनी असंभव बात है? मैं तो अिसे असंभव नहीं मानता। अुनके जैसे अनुभवी लोग अैसा डर छोड़कर अिस काममें मन लगावें तो अिस कठिनाअीका हल बहुत आसान हो जायगा।

दूसरी बात वे परीक्षार्थियोंकी बढ़नेवाली भारी संख्याकी कहते हैं। यह प्रश्न तो सारे शिक्षणका है। अुसका रास्ता निकालना असंभव नहीं है। अुसकी शिकायत भी नहीं की जा सकती। पहले प्रदेश-भाषामें परीक्षा लेकर अुम्मीदवारोंका चुनाव किया जा सकता है। आजकल खिलाड़ियोंकी देशव्यापी जो होड़ रखी जाती है, अुसमें क्या अैसे रास्ते नहीं अख्तियार किये जाते?

अिस सारी चर्चाका मुद्दा दूसरा ही है। देशको नअी प्रान्त-रचनाका काम पूरा करनेके बाद दूसरा काम यह करना है:

१. संविधानमें गिनाअी हुअी भाषाओं द्वारा शिक्षण देने और प्रदेशोंका सारा राजकाज चलानेकी शुरुआत करनी चाहिये। अैसा होगा तो भाषाओंके विकासका काम अपने-आप शुरू होगा और तेजीसे आगे बढ़ेगा।

२. अिसीके साथ, सारे राज्योंमें देशकी आन्तर-भाषा हिन्दीका अनिवार्य शिक्षण शुरू किया जाना चाहिये।

३. विश्वविद्यालयों और सरकारोंको अिस नीतिके अनुसार काम करनेकी पहल करनी चाहिये।

ये काम नये हैं; स्वराज्यको आगे बढ़ाने और मजबूत बनानेवाले काम हैं। अिनमें आनेवाली कठिनाअियोंके डरसे रुकना ठीक नहीं; हमें अुनका सामना करके आगे बढ़ना चाहिये।

अेक तीसरी भाषाको भी हमें भूलना नहीं चाहिये। माध्यमिक शिक्षणमें आगे बढ़नेवालोंके लिअे अभ्यासक्रममें अुसे स्थान देना चाहिये। वह भाषा कौनसी है, यह भी कोअी बड़ा सवाल नहीं है। अंग्रेजी तो है ही। विकल्पसे दूसरी भाषा भी हो सकती है, क्योंकि अब हमारे देशमें अंग्रेजोंका राज्य नहीं चलता। हमारे देशको दुनियाके सारे राष्ट्रोंके साथ संपर्क रखकर काम करना है।

अैसा होगा तो नौकरियोंके लिअे कौनसी भाषामें परीक्षायें ली जायं, यह प्रश्न अपने-आप हल हो जायगा। यहां अेक बात याद रखनी चाहिये कि अिन परीक्षाओंमें बैठनेवाले किसी भी अुम्मीदवारको भाषाके कारण दूसरोंकी तुलनामें नुकसानमें नहीं रखा जा सकता। यह चीज बुनियादी हकके तौर पर मानी जानी चाहिये। अिसलिअे अुम्मीदवार जिस भाषामें चाहे अुस भाषामें परीक्षा देनेका अुसे हक होना चाहिये। अैसा व्यापक विचार करें तो प्रो० सिद्धान्त समान स्तर वगैराके बारेमें जो बड़ा डर रखते हैं वह दूर हो जायगा और देशप्रेमके खातिर अुसका सामना करनेका पराक्रम संभव होगा। अिस पराक्रमसे पीछे तो कभी हटा ही नहीं जा सकता।

६-१-'५६ **मगनभाई देसाई**

(गुजरातीसे)

शिक्षाका माध्यम

लेखक: **गांधीजी; संपा० भारतन् कुमारप्पा**

कीमत ०-४-० डाकखर्च ०-२-०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद-१४

पूर्वी बनाम पश्चिमी मूल्य

रवीन्द्रनाथ टागोरने अपने अेक निबंधमें अिस प्रकार लिखा है:

"प्राचीन ग्रीसकी सभ्यताका पोषण और विकास नगरोंकी दीवारोंके भीतर हुआ था। वास्तवमें, सारी आधुनिक सभ्याताअें अींट-चूनेके झूलों पर झूल कर ही बढ़ी हैं। ये दीवारें मनुष्योंके मन पर गहरी छाप डालती हैं। वे हमारे मानसिक दृष्टिकोणमें 'फूट डालो और राज्य करो' के सिद्धांतको जमा देती हैं, जो हममें अुन दीवारोंको मजबूत बनाकर हमारी सारी विजयोंको सुरक्षित बनाने और अुन्हें अेक-दूसरेसे अलग करनेकी आदत पैदा कर देता है।

"भारतमें हमारी सभ्यताने वनों और जंगलोंमें जन्म लिया था, और अिस स्रोत तथा वातावरणसे अुसने अेक विशिष्ट स्वरूप ग्रहण किया। . . .

"भारत जब अपनी भौतिक समृद्धिके अुच्च शिखर पर पहुंचा हुआ था, तब भी अुसका हृदय सदा कठोर त्याग और तपस्यापूर्ण आत्मज्ञानके प्राचीन आदर्श तथा तपोवनोंके आश्रमोंके सादे जीवनके गौरवको आदरकी दृष्टिसे देखता था और वहांके तपस्वियोंमें संचित बुद्धिमत्ता और ज्ञानसे अुत्तम प्रेरणा प्राप्त करता था।

"पश्चिम अिस विचारमें गौरव लेता मालूम होता है कि वह प्रकृतिको अपने वशमें कर रहा है। . . . यह भावना नगरकी दीवारोंसे बनी आदत और प्राप्त हुअी मानसिक तालीमकी अुपज है। क्योंकि नगरके जीवनमें मनुष्य स्वभावतः अपनी मानसिक दृष्टिके अेकत्र प्रकाशको अपने ही जीवन और कार्योंकी ओर मोड़ता है; अिससे अुसके और सार्वभौम प्रकृति — जिसकी गोदमें वह रहता है — के बीच कृत्रिम अलगाव पैदा होता है।

"लेकिन भारतमें हमारा दृष्टिकोण अिससे भिन्न था; वह मनुष्यके साथ जगत्को भी अेक महान सत्य मानकर शामिल करता था। . . ." (साधना – प्रकरण १)

सरदार पणिक्करने विश्वभारती, शान्तिनिकेतनके पदवीदान-समारंभके अवसर पर भारतकी सभ्यता और संस्कृतिके अिस महान सत्यकी निन्दा करते हुअे, लगभग अुसका मजाक अुड़ाते हुअे, अपने भाषणमें जो बातें कहीं वे धृष्टतापूर्ण नहीं तो अत्यन्त साहसपूर्ण जरूर थीं। शान्तिनिकेतनमें अपनी डिग्रियां और डिप्लोमा लेनेके लिअे अिकट्ठे हुअे युवक-युवतियोंके सामने सरदार पणिक्करने अपनी वक्तृताका जो कौशल दिखाया, अुसका 'हिन्दू' ने (ता० २७-१२-'५५) नीचेके शब्दोंमें बहुत ठीक वर्णन किया है:

"मालूम होता है सरदार पणिक्करको अैसे झूठे भूतोंको अिकट्ठा करनेमें बड़ा आनन्द आता है, जिन्हें वे अपने वाक्चातुर्यकी फूंकसे बड़ी आसानीसे अुड़ा सकते हैं।"

अिस अितिहासवेत्ता विद्वानने वाणीके स्पर्शसे नाचनेके लिअे जिन 'झूठे भूतों' को बुलाया था, वे ये हैं: (१) भारतने "गरीबीको राष्ट्रीय आदर्श" के रूपमें स्वीकार किया है। "सादे जीवनका सिद्धान्त, जिसे अुच्च जीवनको प्रोत्साहन देनेवाला मान लिया जाता है, केवल गरीबीकी ही पूजा है।" (२) यह विचार कि "भारत बाकी दुनियासे ज्यादा आध्यात्मिक है आत्मवंचनाके सिवा और कुछ नहीं है।" "वास्तवमें देखा जाय तो भारतमें भौतिकवादका जितना बोलबाला है, अुतना और कहीं नहीं है।" और (३) ग्रामजीवनकी और गृह-अुद्योगों तथा ग्रामोद्योगों पर आधारित ग्राम्य अर्थरचनाकी पूजा अपने अतीतके विषयमें हमारी विकृत दृष्टि पर आधार रखती है, क्योंकि "भारतमें हमेशा शक्तिशाली शहरी जीवन विद्यमान रहा है।"

www.vinoba.in

अिसलिअे अुन्होंने आश्रम-मनोवृत्तिकी निन्दा की, जो अुनकी रायमें केवल गरीबीकी ही पूजा है। क्या भारत-सरकारके अुद्योग-मंत्री श्री टी० टी० कृष्णमाचारीने भी लगभग अैसे ही सुरमें गांधीवादी आश्रमोंकी निन्दा नहीं की थी?

हम नहीं जानते कि किस कारणसे सरदार पणिक्करका संतुलन बिगड़ गया और अुन्होंने अैसी बातें कह डालीं, जो मेरी रायमें गलत अितिहास और अुससे भी ज्यादा गलत सामाजिक तत्त्वज्ञान प्रस्तुत करती हैं। लेकिन अुन्होंने भारतकी संस्कृतिके बारेमें जो दृष्टि प्रकट की वह बिलकुल नयी या अनोखी नहीं है, क्योंकि अैसी विकृत या असन्तुलित दृष्टि अुन लोगोंमें अक्सर पाअी जाती है, जिन्होंने पश्चिमके आधुनिक विज्ञान तथा अन्य विद्याओंका जी भरकर पान किया है तथा जो जीवन-मानको अधिकाधिक अूंचा अुठानेकी पागलपन भरी दौड़वाले अुसके सामाजिक तत्त्वज्ञानसे मोहित हो गये हैं। अैसे लोग अपने पांडित्यके अभिमानमें यह भूल जाते हैं कि अतृप्ति और संतोषका अभाव ही सच्ची गरीबी है, संतोष गरीबी नहीं बल्कि आत्माका अेक अनोखा गुण है — सच्ची समृद्धि है, जीवनमें जो कुछ सादा है वह सब आवश्यक तौर पर कंगालियत या नीरसताका भी द्योतक नहीं है, और यह कि अुच्च जीवन हमेशा अुच्च विचार या अच्छे जीवनका भी द्योतक नहीं होता — वह आजकी पीस डालनेवाली असमानताओं और गला काटनेवाली होड़की दुनियामें सौ फीसदी बुरा जीवन भी हो सकता है।

आश्चर्यकी बात तो यह है कि अैसा किसीने भी कब कहा कि भारत गरीब राष्ट्र रहे, और गरीबी हमारा राष्ट्रीय आदर्श हो! अगर सरदार पणिक्करने समृद्धि और शहरी सभ्यता पर अपना यह भाषण सर्वोदयकी विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था, जो अुनके जैसे लोगोंको कंगाल अर्थ-व्यवस्था मालूम हो सकती है, का जवाब देनेके लिअे किया हो — अगर मेरा यह अनुमान ठीक हो, तो मुझे अितना ही कहना है कि सरदार पणिक्कर न केवल सर्वोदयके हिमायतियोंके साथ, बल्कि स्वयं अपने साथ भी भारी अन्याय करते हैं। 'अमृत बाजार पत्रिका' ने अपने 'भव्य भाषण' नामक अग्रलेखमें अिसका ठीक अुत्तर देते हुअे लिखा है:

> "रवीन्द्रनाथ अुन लोगोंमें से थे, जिन्होंने गृह-अुद्योगोंकी सबसे पहले हिमायत की थी। अुन्होंने शहरी सभ्यताके मूल्योंसे कभी अिनकार नहीं किया, न अुन्होंने कभी अुनके बारेमें अपना भय प्रकट किया। . . . महात्मा गांधीकी तरह वे यह मानते थे कि गृह-अुद्योग हमारी ग्राम्य अर्थ-व्यवस्थाको स्वावलंबी बनानेकी कुंजी हैं। . . . परंतु प्रश्न तो यह है कि क्या आज भी . . . गांवोंको अुनके अधिकारका स्थान दिया गया है? यदि भारतके गांव गरीबी, अज्ञान, रोगों और बेकारीके चंगुलमें ही फंसे रहनेवाले हों, तो शहरी सभ्यता खड़ी करनेकी हमारी सारी प्रिय योजनायें स्वप्न ही बनी रहेंगी।"

बेशक, भारतकी समस्याके अिस महत्त्वपूर्ण पहलू पर जोर देनेका अर्थ गरीबीकी पूजा नहीं है। पश्चिमी विद्याओंके विद्वान और शहरोंमें रहनेवाले लोगोंकी, जो पश्चिमके यंत्र-विज्ञानकी तड़क-भड़कसे चौंधिया गये हैं, असली कठिनाअी यह है कि वे अिस पहलूको भूल जाते हैं और मानो अुस पर ध्यान देनेकी तकलीफ ही गवारा नहीं करते। अैसे लोगोंको 'हिन्दू' ने ठीक स्मरण कराया है कि:

> "अिसमें खतरा तो यह है कि सदाशयवाले (सरदार पणिक्कर जैसे) लोग हर तरहके परिवर्तनको प्रगति माननेके भ्रममें स्वच्छन्द आचरण और अविवेकपूर्ण सांस्कृतिक मनोवृत्तिका अुपदेश दे सकते हैं। अुसका असर तो यही होगा कि जीती-जागती परंपराके आधार पर जीवन बितानेवाली आम जनता तथा बुद्धिजीवी वर्ग — जो अपना आधार ही खो बैठा है — के बीचकी खाअी और बढ़ जायगी।"

गीताके कथनानुसार (अध्याय २–४१ . . .) भोग और अैश्वर्यकी अुपासना भौतिकवाद है; दूसरे अेक अध्यायमें कहा गया है कि वह असुरोंका मार्ग है।

भारत गीतामें बतायी गअी अिस जीवन-पद्धतिका त्याग करता है, क्योंकि वह वास्तवमें भौतिकवाद है। विज्ञानकी सहायतासे शस्त्रास्त्रकी होड़की हद तक नीचे अुतर आनेवाली पश्चिमकी सत्ताकी अभिलाषा (अर्थात् अैश्वर्यासक्ति) और अधिकाधिक अूंचे जीवन-मानकी दौड़ द्वारा प्रकट होनेवाला अैश-आराम और वैभव-विलाससे भरे जीवनका मोह (अर्थात् भोगासक्ति), ये दोनों मिलकर अिस भौतिकवादको जन्म देते हैं। यह आधुनिक पश्चिमी दुनिया पर हावी हो गया है। अिन दोनोंमें प्राप्त हुअी सफलताने पश्चिमको अभिमानी भी बना दिया है। और गीताके शब्दोंमें अुसका फल होता है: 'समाधौ न विधीयते'। अुससे संतोष और शान्ति प्राप्त नहीं होती। अिसका मार्ग अूपरके भौतिकवादसे अिनकार करना और विधायक शांतिके लिअे काम करना है। भारत अिसीकी हिमायत करता है। और शांतिका अर्थशास्त्र वह नहीं है जिसका पश्चिम आज अनुकरण कर रहा है, बल्कि वह है जिसकी सर्वोदयका विचार हिमायत करता है — अर्थात् सादा जीवन और अूंचे विचारके आदर्शके साथ जुड़ी हुअी कृषि और अुद्योगों पर आधार रखनेवाली विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था। गांधीजीने पूर्वी और पश्चिमी मूल्योंका महत्त्वपूर्ण भेद नीचेके स्मरणीय शब्दोंमें बताया था:

> "युरोपकी सभ्यता बेशक युरोपके लोगोंके लिअे अनुकूल है, लेकिन अगर हम अुसकी नकलका प्रयत्न करेंगे तो भारतके लिअे वह नाशकारी सिद्ध होगी। मेरा मतलब यह नहीं है कि अुसमें जो कुछ अच्छा हो और हमारे लेने और पचाने लायक हो अुसे हम न लें और न पचायें, और न मेरे कहनेका यह मतलब है कि अुसमें जो भी बुराअी पैठ गअी है अुसे युरोपके लोगोंको छोड़ना नहीं पड़ेगा। भौतिक अैश-आरामकी निरंतर खोज और अुसकी वृद्धि अेक अैसी बुराअी है, और मैं यह कहनेका साहस करता हूं कि युरोपके लोग जिस अैश-आरामके गुलाम बन रहे हैं अुसके बोझके नीचे दबकर अुन्हें अपना नाश नहीं करना है, तो अुन्हें खुद अपने अिस दृष्टिकोणमें सुधार करना होगा। हो सकता है मेरी यह राय गलत हो, लेकिन अितना तो मैं जानता हूं कि भारतके लिअे सोनेके हरणके पीछे दौड़नेका मतलब निश्चित मृत्यु ही होगा। हम अपने हृदयोंमें अेक पश्चिमी दार्शनिकका यह सूत्र अंकित कर लें: 'सादा जीवन और अूंचे विचार।' आज यह निश्चित है कि देशके लाखों-करोड़ोंका जीवन अूंचा नहीं हो सकता और हम जैसे थोड़े लोग, जो आम जनताके लिअे सोचनेका दावा करते हैं, अूंचे जीवनकी मिथ्या शोधमें अूंचे विचारोंको खो बैठनेका खतरा अुठा रहे हैं।" (यंग अिंडिया, ३०–४–'३१)

६–१–'५६ मगनभाई देसाई

(अंग्रेजीसे)

हमारे गांवोंका पुनर्निर्माण

लेखक: गांधीजी

संपादक: भारतन् कुमारप्पा

कीमत १–८–० डाकखर्च ०–५–०

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद–१४

www.vinoba.in

कपड़ा-अुद्योगका विकेन्द्रीकरण

[ता० १३–१४ दिसम्बर, १९५५ को नअी दिल्लीमें अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्डकी जो बैठक हुअी, अुसमें अुसने नीचेका प्रस्ताव पास किया।]

कर्वे (ग्रामोद्योग और छोटे पैमानेके अुद्योग, दूसरी पंचवर्षीय योजना) समितिकी रिपोर्ट पर विचार करनेके बाद, बोर्ड अुसकी मुख्य सिफारिशोंके बारेमें अपनी सामान्य स्वीकृति प्रकट करना चाहता है; अलबत्ता यह स्वीकृति अुस मेमोरेण्डमके अधीन रहेगी जो बोर्ड द्वारा नियुक्त की गअी अुपसमितिने योजना-कमीशनके सामने पेश किया है और जिसके साथ बोर्डकी पूरी सहमति है। कर्वे-समितिने समग्र राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्थाके हितमें अिस बातको निश्चित बनानेके महत्त्व पर जोर दिया है कि देशके रोजाना अुपयोगकी चीजें बनानेवाले अुद्योगोंका भावी विकास अधिकतर विकेन्द्रित पद्धति पर होना चाहिये और बड़े अुद्योगोंकी अुत्पादन-शक्तिके विस्तारको रोकनेके लिअे विभिन्न क्षेत्रोंमें आवश्यक कदम अुठाये जाने चाहिये; बोर्ड अिसका खास तौर पर स्वागत करता है। अिस संबंधमें कर्वे-समितिने जो विशेष सिफारिशें की हैं, खास करके चावल-कुटाअीकी हलर और शेलर मिलोंके लिअे नये परवाने न देनेके बारेमें, अुन सबका बोर्ड समर्थन करता है।

बोर्डका यह निश्चित मत है कि भूतकालमें केन्द्र और राज्योंमें ग्रामोद्योगों और गृह-अुद्योगोंकी प्रगति और विकासके लिअे जिम्मेदार अेक स्वतंत्र मंत्रालयके अभावमें अिन अुद्योगोंकी तरफ काफी ध्यान नहीं दिया गया। अिस कारणसे बोर्ड कर्वे-समितिके अिस प्रस्तावका समर्थन करता है कि केन्द्रमें अेक अैसा मंत्रालय कायम किया जाय, जिसे विभिन्न ग्रामोद्योगों और गृह-अुद्योगोंके विकासकी तथा केन्द्रीय सरकार द्वारा कायम किये गये विभिन्न अ० भा० बोर्डोंकी प्रवृत्तियोंका संबंध जोड़नेकी जिम्मेदारी सौंपी जाय।

कर्वे-समितिकी सिफारिशोंमें बोर्ड अुन सिफारिशोंको सबसे महत्त्वपूर्ण मानता है, जो अुसने सूती कपड़ेके अुद्योगके बारेमें की हैं। अुनमें मुख्य वह है जिसमें कहा गया है कि दूसरी पंचवर्षीय योजनाके समयमें कपड़ेकी सारी अतिरिक्त मांग पूरी करनेका काम हाथ-करघा अुद्योगके लिअे सुरक्षित रखा जाय। अिसके लिअे कपड़ा-मिलोंमें अतिरिक्त करघे बढ़ानेके लिअे कोअी परवाने न देने तथा यंत्रकरघोंका अुत्पादन न बढ़ने देनेकी मौजूदा नीति जारी रखनी होगी। बोर्डकी रायमें कर्वे-समितिकी सिफारिशोंके मुताबिक अुद्योगके दोनों विभागोंकी अुत्पादन क्षमताको क्रमशः ५ अरब गज और २० करोड़ गज तक ही सीमित रखना चाहिये।

बोर्ड अिस बातकी नोंध लेता है कि भारत-सरकारकी तरफसे अंबर चरखे पर जो टेकनिकल परीक्षण चल रहे हैं अुनके परिणाम जब तक बाहर नहीं आते, तब तक कर्वे-समितिने बोर्डके अुस कार्यक्रमकी जांच करना ठीक नहीं समझा है जो बोर्डने देशमें बड़े पैमाने पर अंबर चरखे दाखिल करके हाथ-करघोंके लिअे सूत मुहैया करनेके बारेमें बनाया है। चूंकि अिन परीक्षणोंके पूरे होनेमें समय लगेगा तथा अिस बातकी जांच करनेमें भी समय जायगा कि हाथ-करघा बुनकर अम्बर चरखेका सूत स्वीकार करेंगे या नहीं, अिसलिअे बोर्ड कर्वे-समितिकी अिस रायसे सहमत है कि बोर्डके कार्यक्रमके अिस भागके बारेमें अप्रैल १९५६ के अन्त तक कोअी निर्णय न किया जाय। लेकिन अैसी देरी सूत-अुत्पादनकी विकेन्द्रित पद्धतिके विस्तार और विकासकी संभावनाको कोअी हानि न पहुंचावे, अिस खयालसे बोर्ड कर्वे-समितिकी अिन सिफारिशोंको स्वीकार करता है कि कमसे कम मअी १९५६ तक केन्द्रीय सरकार मिलोंमें नये तकुअे बढ़ानेके लिअे कोअी लाअिसेन्स न दे। बोर्डकी रायमें कर्वे-समितिकी रिपोर्टमें बताअी गअी यह हकीकत सरकारके अैसे कदमको अुचित ठहराती है कि मिलोंकी मौजूदा अुत्पादन शक्ति और अुसमें वृद्धि करनेवाले जो कताअी घटक आगे सूत-अुत्पादनमें लगनेवाले हैं, दोनों मिलकर विकास कर रहे हाथ-करघा अुद्योगकी जरूरतका सारा सूत लगभग १९५७ के अंत तक मुहैया करनेके लिअे काफी होंगे। बोर्ड यह मानता है कि मिलोंकी मौजूदा अुत्पादन शक्तिको तथा भविष्यमें बढ़नेवाली अुत्पादन शक्तिको ध्यानमें रखते हुअे मिलोंको अतिरिक्त तकुओंके लाअिसेन्स देनेसे कपड़ा-अुद्योगके कताअी-विभागके विकेन्द्रित विकासकी संभावनाओं तथा अुसके माध्यमके जरिये गांवोंमें बड़ी संख्यामें लोगोंको अनुकूल काम देनेकी संभावना पर बुरा असर होगा।

सर्व-सेवा-संघके साथ बोर्डने भी केन्द्रीय सरकारकी अिस अिच्छाको मान्य रखा है कि अम्बर चरखेकी यांत्रिक रचना और अुत्पादन शक्तिके बारेमें परीक्षण और प्रयोग किये जायं, लेकिन बोर्ड यह मानता है कि ये परीक्षण अधिक व्यापक आधार पर किये जाने चाहिये। बेशक, सूतकी सफाअी, सूतके अंकमें फेर-बदल, सूतकी मजबूती वगैरा पहलुओंकी जांच सरकारके टेकनिकल निष्णातोंको करनी चाहिये। लेकिन बोर्ड यह बताना चाहता है कि यह प्रयोग और जांच हमारी दृष्टिमें रहे ध्येयका खयाल रखकर की जानी चाहिये। बोर्डकी रायमें यह ध्येय कर्वे-समितिने ठीक ढंगसे पेश किया है। वह ध्येय है: अैसे चरखेकी खोज की जाय जो नीचेकी कसौटियों पर खरा अुतर सके — कम कीमत, यांत्रिक दृष्टिसे पूर्ण लेकिन सादी रचना, आसानीसे चलाये जाने और मरम्मत किये जाने लायक, तथा आम तौर पर बुनकर स्वीकार कर सकें अैसा अच्छी जातका सूत पैदा करनेवाला।

अिस आधार पर जांच करनेके लिअे बोर्ड अुत्पादन मंत्रालयसे अेक छोटी समिति नियुक्त करनेकी सिफारिश करता है। अिस समितिमें अुत्पादन मंत्रालय, व्यापार-अुद्योग मंत्रालय और योजना मंत्रालयकी ओरसे सदस्य नामजद किये जायं, जो कर्वे-समिति द्वारा बताअी गअी तारीखसे पहले अपनी जांच पूरी कर दें। यह समिति अिन बातोंकी भी जांच करे:

"(१) चरखा-सेटके अलग अलग औजार या यंत्र हाथसे चलाये जा सकते हैं या नहीं?

(२) क्या अेक सबल बालिग मनुष्य बीच बीचमें थोड़ा आराम लेकर, मान लीजिये हर दो घंटोंके बाद १५ मिनटका आराम और ४ घंटेके बाद अेक या दो घंटेकी छुट्टी लेकर, बिना थके अुन औजारोंको ८ घंटे चला सकता है?

(३) जिस आदमीने ६ सप्ताहकी तालीम ली है और दूसरे ६ सप्ताह तक अंबर चरखे पर नियमित काम किया है, वह ८ घंटेका कारगर काम करके अिन औजारों पर कपाससे सूत-कताअी तककी क्रियायें करके ८ गुंडी सूत कात सकता है, या पूनियां तैयार मिलें तो अितने ही समयमें १६ गुंडी सूत कात सकता है?.

(४) ये औजार या यंत्र अनुकूल फेरबदल करनेसे ६ से १८, १८ से ३२ और ३२ से ४८ अंकका मोटा, मध्यम और बारीक सूत पैदा कर सकते हैं?

(५) क्या अिस चरखे पर काता जानेवाला सूत हाथ-करघे पर बुना जा सकने जितना समान होता है, यानी सूतके अंकमें फेरबदल करनेसे वह कंघीमें से गुजरते समय बार बार टूटता तो नहीं? (यह सामान्य अनुभवकी बात है कि सूतकी समानतामें ४ से ६ अंकका फेरबदल करनेसे वह बहुत ज्यादा नहीं टूटता।)

(६) क्या यह सूत हाथ-करघे पर बुना जा सके अितना मजबूत होता है, यानी वह मांड़ लगाने और बुननेमें

www.vinoba.in

कोअी खास कठिनाअी तो नहीं पैदा करता? यह सूत लगभग अुतनी ही आसानीसे और अुतनी ही गतिसे बुना जाना चाहिये, जितनी आसानी और जितनी गतिसे बुनकरोंको बाजारमें मिलनेवाला औसत सूत बुना जाता है। अेक कुशल बुनकर प्रति आठ घंटे काम करके ८ से १० गज कपड़ा बुन लेता है; अिसमें ताने-बानेकी बोबिनें तैयार करनेमें लगनेवाले समयका हिसाब नहीं किया गया है। यह आशा रखी जाती है कि अम्बर चरखेके सूतसे अिसका ७५ प्रतिशत अुत्पादन तो होना ही चाहिये।

(७) वर्कशापमें अिस बातका अमली प्रयोग किया जा सकता है कि अम्बर चरखा कैसे काम करता है और अंबर चरखेका तथा मिलका सूत बुननेवाला हाथ-करघा कैसे काम करता है।

(८) यह जरूरी है कि अलग अलग अंकके सूतके लिअे रूअीकी अुपलब्ध जातियां निश्चित कर दी जायं। (मिलोंकी तरह यहां रूअीकी मिलावट तैयार करनेका कोअी प्रश्न नहीं अुठता। अलग अलग जातियोंकी रूअी अलग अलग अंकोंके लिअे काममें ली जायगी।) यह बतानेके लिअे अेक सूची तैयार की जा सकती है कि अम्बर चरखेके सेट पर अलग अलग अंकोंका सूत कातनेके लिअे रूअीकी कौनसी जातियां अनुकूल होती हैं।

(९) बुनाअीके प्रयोगोंके बारेमें अंबर चरखेके तथा मिलके सूतसे हाथ-करघे पर बुने जानेवाले विशेष कंघियोंके अनुकूल कपड़ोंकी सूची तैयार की जा सकती है।

(१०) अम्बर चरखेके सूतकी मजबूती, अंकोंके फेर-बदल वगैराके परीक्षणके साथ अुतने ही अंकके मिलके सूतके अुसी तरहके परीक्षणकी तुलना की जा सकती है।

(११) कताअी और बुनाअीकी अलग अलग अवस्थाओंमें होनेवाले बिगाड़के प्रतिशतका अध्ययन किया जा सकता है और अुसी जातिकी रूअीसे तैयार होनेवाले अुतने ही अंकके मिल-सूतके अुत्पादनमें होनेवाले अुसी तरहके बिगाड़के साथ अुस अध्ययनकी तुलना की जा सकती है।"

बोर्ड अिस बात पर जोर देना चाहता है कि अम्बर चरखेके लिअे बनाये गये बोर्डके कार्यक्रम सम्बन्धी निर्णयको स्थगित रखनेका यह मतलब नहीं होना चाहिये कि अम्बर चरखेके प्रदर्शन और अुसके अुत्पादनका काम भी स्थगित कर दिया जाय। बोर्डका यह विश्वास है कि अम्बर चरखेको दाखिल करनेसे जो अनुकूल भूमिका देशमें तैयार हुअी है, अुसका चरखेकी मददसे अुत्पादन बढ़ानेमें, खास करके दूसरी पंचवर्षीय योजनाके अेक अविभाज्य अंगके रूपमें अुसे अपनाये जानेकी भूमिका तैयार करनेमें, लाभ अुठाना चाहिये। दूसरी तरह भी बोर्ड देशके परम्परागत कतवैयों और कत्तिनोंमें अुसे दाखिल करनेका प्रयत्न करेगा, ताकि अुत्पादनकी गति और गुण बढ़ाया जा सके और कताअीसे ज्यादा कमाअी की जा सके। अिसलिअे बोर्ड केन्द्रीय सरकारसे प्रार्थना करता है कि वह अपने सामने पेश किये जा चुके अम्बर चरखेके प्रथम वर्षके कार्यक्रमको स्वीकार करे और अगले सालके बजटमें अुसके लिअे अुचित व्यवस्था करे।

बोर्ड यह बात स्पष्ट कर देना चाहता है कि यह कार्यक्रम मौजूदा अम्बर चरखेकी मददसे सूत पैदा करने पर आधार रखता है, क्योंकि बोर्डको यह विश्वास है कि अपने आजके रूपमें भी वह सूतका अुतना अुत्पादन कर सकता है जितनेका अुसके लिअे दावा किया जाता है। लेकिन बोर्ड अिस बातको स्वीकार करता है कि शिल्पकलामें अुन्नति होनेकी गुंजाअिश हमेशा रहनेवाली है और अम्बर चरखेमें हाथसे, पांवसे या बिजलीसे चलनेवाले अुत्पादनके अेक औजारके रूपमें सुधार हो सकता है। बोर्डने जिन सलाहकारोंकी नियुक्तिकी सिफारिश की है, अुनका कार्यक्षेत्र निर्धारित करनेवाली शर्तोंमें अम्बर चरखेकी आजकी यांत्रिक रचनामें तुरन्त किये जानेवाले सुधार बतानेका आदेश किया गया है। अिसके सिवा, बोर्ड थोड़े ही समयमें मगनवाड़ी (वर्धा) में शुरू होनेवाली अनुसंधान-शालाके कार्यक्रमके प्रथम अंगके रूपमें विकेन्द्रित कताअी तथा विकेन्द्रित सूती कपड़ा अुद्योगके दूसरे पहलुओंसे सम्बन्ध रखनेवाली प्रक्रियाओंके बारेमें और अुनके औजारोंमें सुधार करनेके सम्बन्धमें वैज्ञानिक शोधका काम हाथमें लेना चाहता है। बोर्ड आशा करता है कि अैसी शोध स्वतंत्र रूपसे काम करनेवाले कारीगरोंकी आय बढ़ानेमें और अुत्पादनका खर्च घटानेमें सहायक होगी। दूसरी पंचवर्षीय योजनाके ग्रामोद्योगों और छोटे पैमानेके अुद्योगोंसे सम्बन्ध रखनेवाले समग्र कार्यक्रमके अेक अंगके रूपमें अम्बर चरखेको शामिल करनेके बारेमें लिया जानेवाला निर्णय मअी १९५६ तक स्थगित रखा जानेके कारण अैसा माना जाता है कि बोर्डको बादमें अुस कार्यक्रमके खर्चका अन्दाज सरकारके सामने पेश करनेका मौका मिलेगा। परन्तु अुसके दो पहलू हैं, जिनकी ओर बोर्ड ध्यान खींचना चाहता है। बोर्डके प्रस्तावोंमें अम्बर चरखेका सूत मुहैया करनेके लिअे जो रकम निर्धारित की गअी है वह काफी अूंची है। अुसका कारण यह है कि जिन लोगोंको थोड़े समयका और जिन लोगोंको पूरे समयका काम देनेका सोचा गया है, अुनकी संख्या लगभग पचास लाख तक पहुंचती है। अिस कामके संगठनका प्रयत्न भी अुतना ही बड़ा होगा। बोर्डके वर्तमान कार्यक्रममें सूती, रेशमी, अूनी या मिश्र जातिकी खादीकी बिक्री पर रुपये पर तीन आनेकी रकम काटनेकी व्यवस्था की गअी है। अ० भा० हाथ-करघा बोर्डके मौजूदा कार्यक्रमके अनुसार तथा दूसरी पंचवर्षीय योजना सम्बन्धी अुसके प्रस्तावोंके अनुसार हाथ-करघेके कपड़ेकी बिक्री पर रुपये पर डेढ़ आनेसे लेकर दो आने तक रिबेट दिया जाता है। स्वीकार की गअी नीतिके मुताबिक अिन दोनों कार्यक्रमोंका विस्तार होने पर बहुत बड़ी रकमकी जरूरत पड़ेगी। अम्बर चरखेके कार्यक्रमके लिअे जरूरी पैसेकी व्यवस्थाका बोर्ड द्वारा लगाया गया अन्दाज, अिस दृष्टिसे देखने पर, अुस अतिरिक्त रकमको बताता है जो अिन दो योजनाओंके मातहत रिबेट या राहत देनेके लिअे जरूरी होगी। खादी तथा हाथ-करघेके कपड़े पर रिबेट देनेकी नीति सरकारने तय की थी अिसलिअे अधिकाधिक मात्रामें काम देनेके प्रश्नने योजना सम्बन्धी चर्चाओंमें विशेष ध्यान खींचा था। अिसलिअे बोर्डका यह आग्रह है कि अतिरिक्त पैसेकी जो मांग की गअी है, अुसे अुस खर्चके रूपमें समझना चाहिये जो हमारे समाजके सबसे निचले स्तरके लोगोंके लिअे सामाजिक सुरक्षितताका महत्त्वपूर्ण तत्त्व मुहैया करनेके लिअे जरूरी है।

(अंग्रेजीसे)

सर्वोदय

लेखक: गांधीजी; संपा० भारतन् कुमारप्पा

कीमत २-८-० डाकखर्च ०-१२-०

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद-१४

विषय-सूची

		पृष्ठ
भारतकी बेकारीकी समस्या	जे० डी० सुन्दरम्	३६९
ताड़गुड़ अुद्योगका महत्त्व	वि०	३७१
सरकारी नौकरियोंकी परीक्षाओंका माध्यम	मगनभाई देसाई	३७२
पूर्वी बनाम पश्चिमी मूल्य	मगनभाई देसाई	३७३
कपड़ा-अुद्योगका विकेन्द्रीकरण		३७५

www.vinoba.in